بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَٰنِ الرَّحِيمِ

किताब अत-तौहीद के चुनिंदा अध्याय। पांचवां बयान: **शकुन में विश्वास**

शनिवार, 24 फ़रवरी 2024

वक्ता: शैख़ अबू इ्य्याद अमजद रफ़ीक़

1) 'तत़य्युर' और अशुभ शकुन के विषय को पूरी तरह समझने के लिए, हमें इसे पिछले अध्यायों के संदर्भ में देखना ज़रूरी है, क्योंकि यह किताब के पिछले चार या पाँच अध्यायों से जुड़ा हुआ है।

2) पहला अध्याय जिसकी ओर हमें लौटना है, वह है अध्याय 24, जो कि जादू के बारे में है। लेखक (अल्लाह उन पर रहम करे) ने उस अध्याय में यह स्थापित किया कि क्योंकि जादू जिन्नों के ज़रिये दिलों और शरीरों पर छुपा असर डालता है - जिनकी उपासना की जाती है - और इस तरह शिर्क किया जाता है, इसलिए जादू का निर्देश यह है कि यह 'शिर्क अकबर' (बड़ा शिर्क) है, और यह इंसान को इस्लाम के घेरे से बाहर कर देता है।

3) फिर लेखक (अल्लाह उन पर रहम करे) अध्याय 25 में 'सिह्र' (जादू) के विभिन्न प्रकार का उल्लेख करते हैं, क्योंकि जो कुछ 'सिह्र' (जादू) कहा जाता है, वह हमेशा 'शिर्क अकबर' (बड़ा शिर्क) या 'कुफ़्र अकबर' (बड़ा कुफ़्र) नहीं होता।

4) उदाहरण के लिए, जो वाणी (बयान) शक्तिशाली, भावनात्मक हो, तथा प्रभावित कर सके और विश्वास दिला सके, जिसका हृदय पर गहरा प्रभाव हो, उसे 'सिह्र' (जादू) का एक प्रकार माना जा सकता है, और यह नुसूस़ (क़ुरआन और हदीस) में आया है।

5) इसी प्रकार, ज्योतिष और यह विश्वास (अक़ीदा) कि तारों का पृथ्वी पर होने वाली घटनाओं पर प्रभाव पड़ता है, 'सिह्र' की एक अन्य शाखा है।

6) लेखक ने चुगली (नमीमा) का भी उल्लेख किया है, क्योंकि जब यह मामला समाज में फैलता है (जिसमें चुगली और बदनामी शामिल हो सकती है), तो यह दिल और दिमाग को प्रभावित करता है, जिसका प्रभाव एक प्रकार का 'सिह्र' हो सकता है।

7) ऊपर उल्लेखित सभी बातें अध्याय 25 में 'सिह्र' के प्रकार के रूप में आई हैं, जो अध्याय 24 के बाद आता है जिसमें जादू का परिचय दिया गया है। ये अन्य रूप 'सिह्र' के भाषाई अर्थ के अंतर्गत आते हैं, और अपने आप में आवश्यक रूप से कुफ़्र या शिर्क नहीं हैं - सिवाय इसके कि इनमें कुछ विशेष अक़ीदे (मान्यताएँ) शामिल कर दी जाएँ। परन्तु सामान्य विषय यह है की यह दिलों, भावनाओं और व्यवहारों पर छुपा हुआ और सूक्ष्म असर डालते हैं, जो उनसे उत्पन्न होते हैं।

8) निम्नलिखित अध्याय 26 में ज्योतिषियों (काहिन) या भविष्यवक्ता की चर्चा की गई है, जो जादूगरों की तरह, अदृश्य समाचार के लिए जिन्न की सेवाओं का उपयोग करने में सक्षम होने के लिए शिर्क या कुफ्र अकबर करते हैं।

9) अध्याय 27 'अल-नुशराह' पर है और अध्याय 24 और 25 से जुड़ा हुआ है। और 'अल-नुशराह' एक इलाज या उपचार की तरह है और इसका शाब्दिक अर्थ है किसी व्यक्ति को उसके पैरों पर वापस खड़ा करना, उससे उसकी बीमारी या उसके रोग को इलाज के माध्यम से दूर करना।

10) इस अध्याय का विषय 'अल-त़ियरह' (अपशकुन) है, जिसका उल्लेख अध्याय 25 में 'सिहर' या जादू के एक प्रकार के रूप में किया जा चुका है।

11) अध्याय 3, जिसका शीर्षक है, "जो तौहीद को साकार करेगा, वह जन्नत में प्रवेश करेगा", में लेखक इब्न अब्बास (अल्लाह उनसे ख़ुश हो) की हदीस लेकर आए हैं, जिसमें उन 70,000 लोगों के बारे में बताया गया है जो बिना किसी हिसाब-किताब के जन्नत में प्रवेश करेंगे। उनकी विशेषताएँ यह बताई गई हैं कि वे लोग न तो रुक़्या (झाड़-फूँक) की तलाश करते हैं, न ही अपशकुन पर यक़ीन रखते या उन पर अमल करते हैं, बल्कि अपने रब पर भरोसा रखते हैं। इससे पता चलता है कि अपशकुनों पर विश्वास करना और उन पर अमल करना तौह़ीद के लिए हानिकारक है और इसकी पूर्णता और समापन में बाधा डालता है।

12) शेख इब्न उसैमीन (अल्लाह उन पर रहम करे) ने उल्लेख किया कि शकुनों में विश्वास रखना एक ऐसी चीज है जिसे शरीअ़त ने अमान्य कर दिया है क्योंकि यह मनुष्य की बुद्धि, उसके चिंतन और सोच तथा उसके व्यवहार के संदर्भ में उसे नुकसान पहुंचाता है।

13) शेख सुलेमान आल अल-शैख़ (अल्लाह उन पर रहम करे) ने अपनी किताब 'तैसीर अल-अ़ज़ीज़ अल ह़मीद' में समझाया है कि शकुनों पर विश्वास करना शिर्क से जुड़ा मामला है क्योंकि यह तौहीद को नकारता है या उसकी पूर्णता को नकारता है, क्योंकि यह शैतान की फुसफुसाहट से होता है जो

इंसान को डराती है (बेवजह डर से)। और इसीलिए लेखक ने इसे किताब अल-तौहीद में शामिल किया है ताकि इससे आगाह किया जा सके और इंसान को तौहीद, उसकी पूर्णता और अल्लाह पर भरोसा रखने की ओर निर्देशित किया जा सके।

14) शेख अब्दुल रहमान अल-शैख (अल्लाह उन पर रहम करे) ने अपनी किताब 'फत्हुल-मजीद' में कुछ इसी प्रकार का उल्लेख किया है कि शकुनों पर विश्वास करना और उन पर अमल करना शिर्क है जो तौहीद की अनिवार्य पूर्णता को नकारता है, क्योंकि यह शैतान के वजह से है, उसके कानाफूसी और भय फैलाने के कारण है।

15) ज्योतिषियों पर पिछले अध्याय और शकुनों पर इस अध्याय के बीच एक संबंध है। ज्योतिषी लोगों को भयभीत करते हैं और उन्हें केवल अनुमानों (गुमान) या कोरे झूठ के आधार पर, उन कार्यों को छोड़ने पर मजबूर कर देते हैं, जो वास्तव में उनके लिए लाभकारी हो सकते थे। जिस प्रकार ज्योतिषी अदृश्य के ज्ञान का दावा करता है, उसी प्रकार शकुनों में विश्वास करने वाला व्यक्ति अदृश्य से यह अनुमान लगाता है कि उसे क्या होने वाला है, लेकिन वह केवल काल्पनिक होता है और उसकी कोई वास्तविकता नहीं होती। यह अल्लाह पर भरोसा रखना, और अल्लाह पर आशा रखते हुए और आशावादी रहते हुए अपने कार्यों को आगे बढ़ाने, को नकारता है। यह व्यक्ति को निराधार (बे-असल) भय के कारण लाभकारी कार्यों से विमुख (मैहरूम) कर देता है।

16) अल्लाह (सुब्हानहु व तआला) की शरीअत ऐसे मामलों के साथ आई है जो एक मोमिन को यह सुनिश्चित करने के लिए मार्गदर्शन करते हैं कि उसके कर्म और प्रयास हमेशा अल्लाह पर आशा, आशावाद, दृढ़ निश्चय और दृढ़ संकल्प के साथ हों। इसी प्रकार, अनावश्यक भय के कारण लाभदायक कार्यों को न छोड़ना और ऐसे निराधार और हानिकारक कार्य न करना जो उसके प्रयासों को बर्बाद या व्यर्थ कर दें।

17) शेख़ स़ॉलिह़ अल-फ़ौज़ान (अल्लाह उन्हें महफूज़ रखे) इस अध्याय की व्याख्या (तफ़्सीर) में उल्लेख (बयान) करते हैं कि इस अध्याय में शिर्क और झूठे विश्वास के प्रकारों में से एक प्रकार की व्याख्या है जो तौहीद को नुक़्सान पहुंचाता है, और वह 'अल-तत़य्युर्' है।

18) 'अल-तत़य्युर्' का मतलब है कि कोई व्यक्ति किसी चीज़ को शकुन मानता है, यानी किसी आने वाले नुक़्सान या बुराई का संकेत या कारण। और इस मामले में, यह पक्षी थे क्योंकि यह उन चीज़ों में से एक थी जिसे बुतपरस्त अरब लोग शकुन मानते थे। अल-तियारा शब्द 'अल-त़इर' यानी पक्षियों से बना है।

19) शेख़ स़ॉलिह़ अल-फ़ौज़ान (अल्लाह उन्हें महफूज़ रखे) समझाते हैं कि यह विश्वास (अ़क़ीदा)) कुछ चीज़ों के प्रति नकारात्मक, निराशावादी, निंदक विश्वास और अविश्वास रखने जैसा है, यह सोचकर कि उनके माध्यम से कुछ नुकसान या बुराई आएगी, इस प्रकार, वे उन्हें एक बुरा शकुन मानेंगे।

20) उन्होंने आगे समझाया कि जाहिलीय्यह के लोग परिन्दों को बुरा शकुन मानते थे - अगर वे किसी ख़ास दिशा में उड़ते या किसी ख़ास दिशा से वापस आते। हालाँकि यह मामला परिन्दों से शुरू हुआ था, लेकिन बाद में यह बढ़कर दूसरी चीज़ों तक पहुँच गया, जैसे कोई इलाक़ा, कोई जगह, कुछ लोग, या कुछ जानवर। यहाँ तक कि किसी भी चीज़ को बुरा शकुन मान लिया जाता था।

21) मूसा अलैहिस्सलाम की कहानी का उदाहरण सूरह अल-आ'राफ़, आयत 131 में आता है: तो जब उनपर सम्पन्नता आती, तो कहते कि हम इसके योग्य हैं और जब अकाल पड़ता, तो मूसा और उसके साथियों से बुरा सगुन लेते। सुन लो! उनका बुरा सगुन तो अल्लाह के पास था, परन्तु अधिक्तर लोग इसका ज्ञान नहीं रखते।

22) जब फ़िरऔन और उसके लोगों को बारिश, रोज़ी-रोटी और खाने-पीने की नियमतें मिलतीं, तो वे कहते कि यह सब उनकी अपनी मेहनत, क़ाबिलियत और कर्मों की वजह से है, और वे इसके हक़दार हैं। वे अल्लाह की नियामत और करम का इनकार कर देते। लेकिन जब उन पर कोई मुसीबत आती - जैसे अकाल के वक़्त जब बारिश रुक जाती और कुएँ सूख जाते - तो वे इसका कारण मूसा अलैहिस्सलाम और उनके साथ ईमान लाने वालों को ठहराते। अपनी अज्ञानता की वजह से वे उन्हें अपशकुन समझते और मानते कि वही उनके ऊपर आने वाली बुराइयों का कारण हैं।

23) लेकिन हक़ीक़त यह थी कि मूसा अलैहिस्सलाम और उनके साथ वाले ही भलाई का असली कारण थे, क्योंकि सारी भलाई अल्लाह (सुब्हानहु व तआला) की आज्ञाकारिता से आती है। जैसा कि सूरह अल-आराफ़ की आयत 96 में आता है: "और यदि इन नगरों के वासी ईमान लाते और कुकर्मों से बचे रहते, तो हम उनपर आकाशों तथा धरती की सम्पन्नता के द्वार खोल देते। परन्तु उन्होंने झुठला दिया। अतः, हमने उनके करतूतों के कारण उन्हें (यातना में) घेर लिया।" (7:96)

24) फ़िरऔन और उसकी क़ौम ने वजह और नतीजे के मामले में ग़लती की। उन्होंने भलाई का श्रेय अल्लाह (सुब्हानहु व तआला) को नही दिया, बल्कि बुराई को मूसा अलैहिस्सलाम और उनके लोगों की तरफ़ मंसूब किया। जबकि हक़ीक़त में, उन्हीं के अपने कर्म उनके ऊपर आने वाली बुराइयों का असली कारण थे।

25) इस बारे में शैख़ सालेह अल-फ़ौज़ान (अल्लाह उन्हें महफूज़ रखे) फरमाते हैं कि ईमान वाले लोग असल में भलाई का कारण होते हैं, बुराई का नहीं। और जो भी दुनिया के लोगों पर मुसीबतें, तकलीफ़ें

और परेशानियाँ आती हैं, वो नाफ़रमान, गुनहगार, कुफ़्र करने वाले और शिर्क करने वाले लोगों की वजह से आती हैं।

26) इसी तरह की मिसाल नबी सालिह़ अलैहिस्सलाम के क़िस्से में मिलती है, जिन्हें क़ौम-ए-समूद की तरफ़ भेजा गया था, जैसा कि सूरह अन-नम्ल, आयत 47 में आता है: **"**उन्होंने कहाः हमने अपशकुन लिया है तुमसे तथा उनसे, जो तेरे साथ हैं। (सालेह़ ने) कहाः तुम्हारा अपशकुन अल्लाह के पास है, बल्कि तुम लोगों की परीक्षा हो रही है।**"** इसी तरह सूरह या-सीन, आयत 18 में भी आता है कि: "उन्होंने कहाः हम तुम्हें अशुभ समझ रहे हैं। यदि तुम रुके नहीं, तो हम तुम्हें अवश्य पथराव करके मार डालेंगे और तुम्हें अवश्य हमारी ओर से पहुँचेगी दुःखदायी यातना। तो उसके बाद रसूलों ने जवाब में कहा: उन्होंने कहाः तुम्हारा अशुभ तुम्हारे साथ है। क्या यदि तुम्हें शिक्षा दी जाये (तो अशुभ समझते हो)? बल्कि तुम उल्लंघनकारी जाति हो।

27) इसी तरह, जिन मुशरिक़ों की तरफ़ नबी मुहम्मद (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) को भेजा गया, यानी अरब के बुतपरस्त लोग, उन्होंने भी यही कहा, जैसा कि सूरह अन-निसा, आयत 78 में आता है: "तथा उन्हें यदि कोई सुख पहुँचता है, तो कहते हैं कि ये अल्लाह की ओर से है और यदि कोई आपदा आ पड़े, तो कहते हैं कि ये आपके कारण है।
तो उसी आयत में अल्लाह ने रसूल (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) को हुक्म दिया कि कहो: (हे नबी!) उनसे कह दो कि सब अल्लाह की ओर से है (अन-निसा 4:78)
यानि हर चीज़ - भलाई हो या बुराई - अल्लाह के हुक्म और क़दर से होती है।

28) शैख़ इब्न उसैमीन (अल्लाह उन पर रहम करे) ने 'तत़य्युर' यानी बुरा शक़ लेने के बारे में विस्तार से बताया है। उन्होंने कहा कि यह तीन तरीक़ों से होता है -
(अ) कोई चीज़ जो इंसान देखे,
(ब) कोई बात जो वह सुने, या
(स) कोई बात जो वह जान ले और फिर उसे अपशकुन मान ले, मानो उससे भविष्य में कोई बुराई आने वाली हो।

29) शैख़ अल-लुहैदान (अल्लाह उन पर रहम करे) ने किताब-अत-तौहीद के इस बाब की हदीस की व्याख्या में कहा कि चीज़ों से अपशकुन लेना और उसके बाद किसी काम को छोड़ देना छोटा शिर्क (शिर्क-ए-असग़र) है। लेकिन उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि अगर कोई डर किसी वास्तविक और ज्ञात खतरे की वजह से हो - जैसे कोई रास्ता इस वजह से छोड़ना कि वहाँ कोई हिंसक जानवर घूम रहा है - तो यह जायज़ और प्राकृतिक डर है। यह उस स्थिति जैसा नहीं है जब कोई व्यक्ति किसी पक्षी को अपने पंख फड़फड़ाते हुए बाएँ उड़ते देखे और अपने कार्य को छोड़ दे, जबकि उस पक्षी और संभावित नुकसान के बीच कोई वास्तविक संबंध न हो। इसलिए, कल्पनाओं या वहमों को किसी नुक़सान से जोड़ना ग़लत है; जबकि वास्तविक, सिद्ध और ज्ञात ख़तरे से डरना तर्कसंगत और जायज़ है।

30) अपशकुनों से संबंधित कुरआनी आयतें बयान करने के बाद, शैख़ मुहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब (अल्लाह उन पर रहम करे) ने उस हदीस का ज़िक्र किया जिसमें रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) ने फ़रमाया: "कोई संक्रामक बीमारी (अपने आप) नहीं फैलती, न कोई अपशकुन होता है, न उल्लू में कोई अशुभता है, न सफ़र (महीने) में कोई अपशकुन है, और न सितारों या ग़ूल (भूत-प्रेत) में कोई अशुभता है।"
इस हदीस में बताई गई छह चीज़ें ग़लत तअल्लुक़ (त्रुटिपूर्ण कारण मानने) अंधविश्वास की मिसालें हैं। अर्थात किसी ऐसी चीज़ को कारण मान लेना जिसे अल्लाह ने कारण नहीं बनाया, और फिर उससे डरकर लाभकारी कामों - जैसे रोज़ी कमाने, सफ़र करने, शादी करने आदि - को छोड़ देना।
इन सभी मामलों में यही सिद्धांत लागू होता है कि लोग क़दर (तक़दीर) के हिसाब से हुई अलग-अलग चीज़ों को जोड़कर यह मान लेते हैं कि उनके बीच कोई कारण-परिणाम का रिश्ता है, जबकि अल्लाह की रचना में ऐसा नहीं है।

31) इस हदीस में रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) ने फ़रमाया: "कोई संक्रामक बीमारी (अपने आप) नहीं फैलती। "जाहिलीय्यह (इस्लाम से पहले) के मुशरिक अरब यह मानते थे - जैसा कि इमाम इब्न अब्दुल-बर्र (अल्लाह उन पर रहम करे) और अन्य विद्वानों ने बयान किया - कि जब कोई इंसान किसी दूसरे इंसान से या कोई जानवर किसी दूसरे जानवर से मेलजोल करता है, तो बीमार जानवर की बीमारी दूसरे को लग जाती है। इसलिए नबी (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) ने स्पष्ट किया: "कोई चीज़ अपनी बीमारी किसी दूसरी चीज़ को नहीं फैलाती।" मुशरिक अरब इस 'संक्रामण' और 'अपशकुन' के मसले में बहुत अतिशयोक्ति करते थे। अगर कोई व्यक्ति छींक देता, तो वे इसे बुरा शकुन मानते, जैसा कि इब्नुल-क़य्यिम (अल्लाह उन पर रहम करे) ने उल्लेख किया है। वे छींकने को बीमारी और अशुभ संकेत समझते और इस तरह के वहम और आचरण को अपने व्यवहार का हिस्सा बना चुके थे।

32) यह मामला इसलिए पैदा हुआ कि जब लोग बीमारियों के असंख्य कारणों और उनकी जटिलता को समझ नहीं पाते, तो आसान और सरलीकृत कारण ढूँढने शुरू कर देते हैं - क्यों किसी झुंड के जानवरों या किसी घर-परिवार या बस्ती के लोग एक ही समय में बीमार हो जाते हैं। वे यह मान लेते हैं कि पहला बीमार व्यक्ति अपनी बीमारी दूसरों को "लगा" गया।

लेकिन वे यह नहीं सोचते कि पहले व्यक्ति को बीमारी किसी दूसरे से नहीं लगी, बल्कि वह उसी कारण-श्रृंखला और हालात के अधीन बीमार हुआ, जिनके अधीन बाकी लोग भी थे - क्योंकि वे सभी एक ही जगह, एक ही माहौल और एक ही समय में मौजूद थे।
इसलिए यह कहना कि "उसने अपनी बीमारी अमुक को पहुँचा दी" एक गलती है - ठीक वैसे ही यह कहना भी गलती है कि "उसने अपनी बीमारी अमुक को पहुँचा दी, मगर अल्लाह की इजाज़त और क़दर से"- और इसके दो कारण हैं:
पहला: कोई भी चीज़ अपनी बीमारी या हालात को किसी दूसरी चीज़ में स्थानांतरित नहीं करती। बल्कि हर बीमारी हर व्यक्ति या जीव में नई सृष्टि के रूप में पैदा की जाती है - उसी के लिए जिसके लिए अल्लाह ने उसे मुक़द्दर किया है। यही नबी (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) के इस कथन का अर्थ

है: "कोई चीज़ अपनी बीमारी किसी दूसरी चीज़ को नहीं पहुँचाती।" (इस विषय पर विस्तार से देखने के लिए: इब्न अब्दुल-बर्र का संक्रमण पर बयान पढ़े)

दूसरा: यदि तर्क के तौर पर यह मान भी लिया जाए कि किसी बीमार व्यक्ति के संपर्क में आने से कोई स्वस्थ व्यक्ति बीमार हो सकता है, तब भी यह सिद्ध नहीं किया जा सकता कि वह व्यक्ति वास्तव में उसी संपर्क से बीमार हुआ, और यह नहीं कि वह उन्हीं हालातों और कारणों के अधीन था जिनसे पहला व्यक्ति बीमार हुआ था - और संपर्क केवल एक संयोग था। यही अर्थ है उस हदीस का, जिसमें नबी (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) ने एक बद्दू से फ़रमाया: "पहले (बीमार) को यह किसने दिया?" अर्थात, जैसे पहला व्यक्ति बिना किसी 'संक्रमण' के बीमार हुआ, वैसे ही बाकी लोग भी बीमार हुए - क्योंकि सब पर वही परिस्थितियाँ और वही अल्लाह की तरफ़ से तय किए गए कारण लागू हुए। इसलिए यह कहना कि "अमुक ने अमुक को बीमारी दी" वास्तव में अल्लाह के कार्यों के बारे में अनुमान लगाना और उनके बारे में ग़लत सूचना देना है। सही बात बस यही है कि कहा जाए: "वह अल्लाह की क़दर से बीमार हुआ।"

33) रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) ने इस हदीस में 'संक्रामण' (बीमारी के लगने) के विचार को नकार दिया। बहुत से विद्वानों की यही राय है कि 'संक्रामण' नाम की कोई चीज़ अपने आप में अस्तित्व ही नहीं रखती, क्योंकि नबी (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) ने स्पष्ट रूप से कहा कि "कोई चीज़ अपनी बीमारी किसी दूसरी चीज़ को नहीं पहुँचाती।" - जैसा कि पहले भी उल्लेख किया जा चुका है।

34) कुछ विद्वान यह मानते हैं कि संक्रामण का कुछ हद तक अस्तित्व है और यह कि एक व्यक्ति से दूसरे तक बीमारी का पहुँचना संभव है, जब दोनों का मेल-जोल हो। वे कहते हैं कि बीमार व्यक्ति से दूरी बनाना बचाव के कारणों को अपनाने (असबाब का एहतियात) के दायरे में आता है - जैसे बीमारी से बचने के लिए कोढ़ी से दूर रहना, स्वस्थ ऊँटों को बीमार ऊँटों से अलग रखना, और उस भूमि में प्रवेश न करना जहाँ महामारी फैली हो। बिना किसी ठोस प्रमाण के वे यह दावा करते हैं कि नबी (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) ने संक्रामण का इनकार केवल उस अर्थ में किया था, जिस तरह मुशरिक अरब मानते थे, यानी बीमारी का फैलना अल्लाह की क़दर और मशीयत से बाहर होता है। लेकिन वस्तुतः मुशरिक अरब ऐसा नहीं मानते थे; वे तो क़दर (तक़दीर) को मानने वाले थे और नियतिवाद (स्वतंत्र इच्छा का इनकार) की ओर झुके हुए थे। क़दर का इनकार उनके बीच अज्ञात था। फिर भी, इस दृष्टिकोण के समर्थक नबी (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) के उन निर्देशों को एहतियात के तौर पर लेते हैं, न कि संक्रामण के वास्तविक प्रमाण के रूप में।

35) हालाँकि इसी दृष्टिकोण के अनुसार शैख़ अल-अलबानी (अल्लाह उन पर रहम करे) और इब्न रजब (अल्लाह उन पर रहम करे) जैसे विद्वानों ने स्पष्ट किया है कि एहतियात (सावधानी) की भी एक सीमा है - और वह सीमा शरीअत के दायरे में रहनी चाहिए, उससे आगे नहीं बढ़नी चाहिए। अर्थात, बीमारी से बचाव की सावधानी वैसी नहीं होनी चाहिए जैसी गुमराह लोगों या कुफ़्र वालों की होती है जो इस विषय में अतिशयोक्ति करते हैं।

इसलिए सावधानी बरतना केवल बीमार व्यक्तियों, बीमार ऊँटों आदि के मामलों में लागू होता है, और वह भी शरीअत की निर्धारित सीमा के भीतर।

36) जबकि संक्रामण के पूर्ण इनकार वाले मत के अनुसार, नबी (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) के ये निर्देश केवल कमज़ोर लोगों के लिए रुख़्सत (अनुमति) के रूप में देखे जाते हैं - ताकि वे कोढ़ी से दूर रहें, महामारीग्रस्त भूमि में न जाएँ, और स्वस्थ ऊँटों को बीमारों से अलग रखें - इस डर से कि अगर अल्लाह ने उनके लिए बीमारी मुक़द्दर कर दी और उन्हें उन्हीं कारणों के अधीन कर दिया जिनसे बीमारी पैदा होती है, तो वे भ्रम में पड़कर यह मानने लगेंगे कि बीमारी एक से दूसरे को "लगी" है। ऐसे में वे अज्ञानतापूर्वक "संक्रामण" और "बीमारी के फैलने" जैसी भाषा बोलने लगेंगे, जो केवल अनुमान है।
इसलिए रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) ने इन रास्तों को बंद करने के लिए ऐसे निर्देश दिए - जैसे शराब और व्यभिचार (ज़िना) हराम हैं, वैसे ही उन तक पहुँचाने वाले साधन भी हराम हैं - जैसे शराब पीने की जगह बैठना या ग़ैर-महरम मर्दों और औरतों का खुला मेल-जोल। यह "किसी चीज़ को हराम ठहराना" और "उस तक जाने वाले रास्तों को भी हराम ठहराना" है।

37) कुछ विद्वानों ने संक्रामण के हदीसों के विषय में एक और दृष्टिकोण अपनाया है। उनका कहना है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) के ये कथन मज़बूत ईमान वालों और कमज़ोर ईमान वालों - दोनों के लिए अलग-अलग संदर्भ में हैं। इसलिए उनका फ़रमान, "कोई संक्रामण नहीं है" - मज़बूत ईमान वाले लोगों के लिए है, जिनका तवक्कुल (भरोसा) अल्लाह पर दृढ़ होता है। वे जानते हैं कि हर चीज़ अल्लाह की क़दर से होती है, बीमारी भी उसी की अनुमति से आती है। यदि वे किसी बीमार व्यक्ति से मेलजोल करें और खुद बीमार हो जाएँ, तो वे इसे संक्रामण नहीं कहेंगे, न ही तक़दीर पर आपत्ति करेंगे। जबकि नबी (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) का यह कहना कि "कोढ़ी से भागो", "स्वस्थ ऊँटों को बीमारों के साथ मत मिलाओ", या "महामारीग्रस्त भूमि में मत जाओ" - यह कमज़ोर ईमान वालों के लिए है। क्योंकि यदि वे अल्लाह की क़दर से बीमार हो जाएँ, तो वे शिकायत करेंगे और कहेंगे: "काश! मैं अमुक से न मिला होता", या "काश! मैं उस जगह न गया होता।" इस प्रकार, यह उन्हें तक़दीर पर ऐतराज़ करने और अल्लाह की क़दर के ख़िलाफ़ बोलने की ओर ले जाता।

38) यह ध्यान में रखना चाहिए कि यह पूरा विषय 'अल-तियारह' (अपशकुन और अंधविश्वास) से संबंधित है - यानी किसी काल्पनिक डर या अनुमान के कारण लाभदायक कार्यों को छोड़ देना। ऐसे झूठे कारण और भ्रम इंसान के दिल में भय, चिंता और निराशा पैदा करते हैं। रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लहि व सल्लम) ऐसे सभी वहमों और मान्यताओं से रोकने आए, क्योंकि ये इंसान की तौहीद (एकेश्वरवाद) को नुक़सान पहुँचाते हैं। ये इंसान के चरित्र को कमज़ोर बनाते हैं, नकारात्मक सोच, बदगुमानी और निराशावाद उत्पन्न करते हैं - जिससे व्यक्ति हर चीज़ में बुराई देखने लगता है और जीवन के प्रति निराशाजनक दृष्टिकोण रखने लगता है। जबकि शरीअत का उद्देश्य इसके विपरीत है - वह इंसान के भीतर सकारात्मकता, उम्मीद, दृढ़ता, संकल्प और अल्लाह पर भरोसे के साथ भलाई के कार्यों में आगे बढ़ने की भावना उत्पन्न करती है।

ऑडियो लिंक: https://www.deensahih.com/wp-content/uploads/2024/03/chapter-27-belief-in-evil-omens-shaykh-abu-iyaad.mp3